भगत नामदेव - सबद २३

असुमेध जगने ॥

रागु गोंड, भगत नामदेव, गुरु ग्रंथ साहिब, ८७३

असुमेध जगने ॥
तुला पुरख दाने ॥
प्राग इसनाने ॥१॥
तउ न पुजहि हरि कीरति नामा ॥
अपुने रामहि भजु रे मन आलसीआ ॥१॥ रहाउ ॥
गइआ पिंडु भरता ॥
बनारसि असि बसता ॥
मुखि बेद चतुर पड़ता ॥२॥
सगल धरम अछिता ॥
गुर गिआन इंद्री द्रिड़ता ॥
खटु करम सहित रहता ॥३॥
सिवा सकति स्मबादं ॥
मन छोडि छोडि सगल भेदं ॥
सिमरि सिमरि गोबिंदं ॥
भजु नामा तरसि भव सिंधं ॥४॥१॥

सार: आंतरिक चिंतन की शक्ति तब स्पष्ट होती है जब बाहरी प्रदर्शन का आकर्षण फीका पड़ने लगता है। इस आंतरिक एकाग्रता में ऐसी परिवर्तनकारी शक्ति निहित है जो किसी भी बाहरी तमाशे से कहीं अधिक श्रेष्ठ है। जहाँ बाहरी अभिव्यक्तियाँ पहचान और स्वीकृति की तलाश करती हैं, वहीं आंतरिक कार्य स्पष्टता, ईमानदारी और आत्म-परीक्षण को प्राथमिकता देता है और भ्रमों को दूर करता है। इससे आध्यात्मिक प्रयासों का क्रम सामने आता है, बाहरी क्रियाएँ, जैसे कि रीति-रिवाज और चिन्ह, महत्वपूर्ण हो सकते हैं, किंतु अंततः वह केवल ऊपरी दिखावा मात्र हैं। व्यक्ति जितना

गहराई से अपने आंतरिक कार्य में संलग्न होता है, उसे बाहरी मान्यता की उतनी ही कम आवश्यकता महसूस होती है जिसके परिणामस्वरूप, दूसरों से स्वीकृति पाने की इच्छा धीरे-धीरे घटती जाती है।

असुमेध जगने ॥

अश्वमेध, यानी घोड़े की बलि देने का अनुष्ठान किया जाता है। यह धार्मिक सत्ता और शक्ति के प्रदर्शन के रूप में अनुष्ठानिक प्रथाओं को दर्शाता है जो आंतरिक स्वयं को शुद्ध किए बिना केवल पहचान को बढ़ा सकती हैं।

तुला पुरख दाने ॥

स्वयं को तौलकर उतनी ही मात्रा में धन का दान देना। यह भौतिक दान के माध्यम से आध्यात्मिक पुण्य प्राप्त करने के भ्रमपूर्ण प्रयास को दर्शाता है।

प्राग इसनाने ॥१॥

प्रयाग, जो एक तीर्थ स्थान है, वहाँ अनुष्ठानिक स्नान किया जाता है। यह इस गलत धारणा को दर्शाता है कि कोई विशिष्ट भौगोलिक स्थान आंतरिक अज्ञान को धो सकता है। (१)

तउ न पुजहि हरि कीरति नामा ॥

नामदेव कहते हैं कि इनमें से कोई भी उस सर्वव्यापी स्रोत के चिंतन का अभ्यास करने के समान नहीं है। यह इस बात पर ज़ोर देता है कि अनुष्ठानों का पुण्य, चाहे कितने भी भव्य क्यों न हों, उनमें गहराई की कमी होती है और वह एक क्षण की भी जागरूकता का स्थान नहीं ले सकते।

अपुने रामहि भजु रे मन आलसीआ ॥१॥ रहाउ ॥

हे आलसी मन, अपनी सार्वभौमिक वास्तविकता पर चिंतन कर। यह उस आध्यात्मिक जड़ता को दर्शाता है जो आत्मचिंतन में बाधा बनकर व्यक्ति को बाहरी अनुष्ठानों पर निर्भरता की ओर ले जाता है। (१)(विराम)

गइआ पिंडु भरता ॥
गया, वह तीर्थ स्थल जहाँ पूर्वजों के सम्मान में चावल अनुष्ठानिक चढ़ावे के तौर पर पिंडदान के लिए चढ़ाये जाते हैं। यह रीति, जिसका उद्देश्य अपनी वंश-परंपरा का सम्मान करना और मोक्ष सुनिश्चित करना है तब अपना महत्व खो देती है जब मृतक का उनके जीवनकाल में सम्मान न किया गया हो।

बनारसि असि बसता ॥
पवित्र नगरी बनारस में, अस्सी नदी के तट पर हम निवास करते हैं। यह भ्रम को उजागर करता है कि सच्ची पवित्रता किसी स्थान या प्रतीकों से नहीं बल्कि आंतरिक सामंजस्य से आती है।

मुखि बेद चतुर पड़ता ॥२॥
चारों वेदों को याद कर बिना देखे पाठ करना। यह हमें याद दिलाता है कि जहाँ ज्ञान को रटा जा सकता है, वहीं गहन समझ, अनुभव और सक्रिय जीवन जीने से प्राप्त होती है। (२)

सगल धरम अछिता ॥
सही और नेक इरादे से किया गया हर काम संतोषजनक होता है। यह दर्शाता है कि आंतरिक रूपांतरण सामाजिक और धार्मिक कर्तव्यों के यांत्रिक पालन से अधिक पूर्ण है।

गुर गिआन इंद्री द्रिड़ता ॥
विवेक से मिली अंतर्दृष्टि के माध्यम से, इंद्रियों को दृढ़ता से वश में किया जा सकता है। यह सुझाव देता है कि अनुशासन तभी सार्थक होता है जब वह भय, संदेह या ज़बरदस्ती के बजाय, आंतरिक स्पष्टता में निहित हो।

खटु करम सहित रहता ॥३॥
आध्यात्मिक दर्शनों के आधार पर कर्म करना और उनके अनुरूप जीवन जीना। यह ऐसे जीवन का चित्रण है जो केवल अनुष्ठानों और ज्ञान पर नहीं बल्कि आध्यात्मिकता पर आधारित हो। (३)

सिवा सकति स्मबादं ॥
शिव, जो पुरुषत्व के गुणों का प्रतीक हैं और शक्ति, जो स्त्रीत्व का प्रतीक हैं, उनके विषय में संवाद होता है। यह ऐसी मानसिकता को प्रकट करता है जो लैंगिक पूर्वाग्रहों से ऊपर उठकर स्त्री और पुरुष दोनों ही गुणों को स्वीकार करती है।

मन छोडि छोडि सगल भेदं ॥
मन, अलग हो जाता है और सभी प्रकार के भेदभावों को त्याग देता है। यह उन मानसिक धारणाओं को छोड़ने की ओर संकेत करता है जो आध्यात्मिकता का रूप धारण कर, चेतना को द्वैत के जाल में फंसा लेती हैं।

सिमरि सिमरि गोबिंदं ॥
उस सर्वव्यापी चेतना का चिंतन और मनन करना। यह उस निरंतर प्रयास का प्रतीक है जिसके द्वारा मन को बार-बार, उस एकत्व की सार्वभौमिक वास्तविकता पर केंद्रित किया जाता है।

भजु नामा तरसि भव सिंधं ॥४॥१॥
नामदेव कहते हैं कि उस परम सत्ता का चिंतन करने से, वह भय रूपी इस संसार-सागर को पार कर जाते हैं। यह पुष्टि करता है कि मुक्ति हमारे भय, संदेह और अज्ञात की अस्थिरता पर विजय पाने में निहित है। (४)(१)

तत्त्व: भक्त नामदेव हमें उन मानसिक धारणाओं से मुक्त होने का आग्रह करते हैं जो आध्यात्मिकता का रूप धरकर हमारी चेतना को द्वैत की मानसिकता में फंसा लेती हैं। वह ऐसे समावेशी दृष्टिकोण की वकालत करते हैं जो पूर्वाग्रहों से दूर जाकर स्त्री और पुरुष दोनों गुणों के सामंजस्य को स्वीकार करे और सीमित लैंगिक भूमिकाओं को चुनौती दे। इन सीमाओं से बंधे रहना आध्यात्मिक ठहराव और बाहरी कर्मकांडों पर निर्भरता की ओर ले जाता है। सच्ची मुक्ति हमारे भय और शंकाओं या जीवन की अनिश्चितताओं से बचने में नहीं बल्कि दर्शनशास्त्रों से प्राप्त अंतर्दृष्टि के माध्यम से उनका सामना करने और उन पर विजय पाने में निहित है।

सबद व्याख्या **विनइंदर कौर** और **अमरदीप सिंह**

Oneness In Diversity Research Foundation

वेबसाइट: OnenessInDiversity.com

ईमेल: onenessindiversityfoundation@gmail.com